भाषा - पीयूष

वर्ष VII अंक 2 15 सितंबर 2017

सर्वज्ञं तदहंवन्दे परंज्योतिस्तमोपहम्। प्रवृत्ता यन्मुखाद्देवी सर्वभाषा सरस्वती।

कर्नाटक हिंदी प्रचार समिति की त्रैमासिक मुख-पत्रिका

* भाषा-पीयूष *

समाचार पत्र की पंजीयन संख्या- KARHIN / 2010/33931

मानव संसाधन विकास मंत्रालय(शिक्षा-विभाग)
भारत सरकार के आर्थिक सहयोग से प्रकाशित

भाषा-पीयूष परिवार

संपादक :
डॉ. वि.रा. देवगिरी

सदस्य, संपादक मंडल :
1. डॉ. अजयकुमार सिंग
2.श्री के. एस्. नागराज
3. श्री वाजिदखान

स्वामित्व: कर्नाटक हिन्दी प्रचार समिति
जयनगर, बेंगलूरु - 560 011

मुद्रक : श्री वेंकटेश्वर प्रिंटिंग प्रेस,
जे.पी. नगर, बेंगलूरु - 560078.

संपादक/प्रकाशक :
डॉ. वि.रा. देवगिरी

प्रकाशन स्थल :
कर्नाटक हिंदी प्रचार समिति जयनगर,
बेंगलूरु - 560 011

दूरवाणी संख्या - 080-26568891
फ्याक्स संख्या - 080-26568891
E.Mail-khpsamithi11@g.mail.com

त्रैवार्षिक चंदा रु.150/-आजीवन-600
प्रतिअंक मूल्य रु. 15/-

वर्ष - सातवाँ अंक -2

दक्षिण भारत का सांस्कृतिक, सामाजिक,
साहित्यिक त्रैमासिक वैचारिक पत्रिका

विषय-क्रम

1. संपादकीय 2
2. संत कवि तुलसीदास- रामशरण युयुत्सु 3
3. बसवेश्वर -मूल-प्रो.हनंगडी,
अनुवादक -डॉ. वि.रा. देवगिरी 8
4. ''संत सेना नाई '' -
प्रभाकर रंगनाथ चव्हाण 10
5. राष्ट्रीय ध्वज- चल मरदाने -
हरिवंशराय बच्चन 11
6. 'न' और 'नहीं' का प्रयोग
- प्रा. शशिकांत पशीने 'शाकिर' 12
7. हिंदी को तुरंत राष्ट्रभाषा बनाये - हिंदी वर्ष की
घोषणा करें।-विश्वशांति टेकड़ीवाल 14
8. पूरब और पश्चिम के बीच कठिनाइयाँ
- रॉन 15
9.रहीम काव्य में अभिव्यक्त नीति
-डॉ. कांबले अशोक 26
10.भारत संघ की राजभाषा के रूपमें हिंदी का विकास
- डॉ. एम. रोषन् 30

'भाषा-पीयूष' में प्रकाशित लेखकों/ कवियों की रचना विवरणों से समिति एवम् संपादक मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

रहीम काव्य में अभिव्यक्त नीति

-डां.कांबले अशोक

मनुष्य चाहे जिस किसी भी जाति, धर्म, भाषा, प्रांत, राष्ट्र या काल आदि में क्यों न पैदा हुआ हो, समय, संदर्भ , परिस्थिति के अनुरूप ही उसके मनोभाव प्रकट होते हैं। जैसे- खुशी में हँसना, दु:ख में रोना, सौंदर्य के प्रति आकर्षित होना आदि।

साहित्यकार समाज का दृष्टा एवं सृष्टा होता है। साहित्यकार समाज का अविभाज्य अंग होने के कारण उसके साहित्य में समाज का यथावत् चित्रण होता है। इसीलिए साहित्य को समाज का दर्पण कहते है। साहित्यकार अपने समाज में व्याप्त अंधविश्वास, कुप्रथाओं आदि को देखकर अपनी ज्ञान-सीमा के द्वारा अपने पथभ्रष्ट समाज के ज्ञान चक्षु खोलकर उसे सत्पथ पर लाने का प्रयास करते हुए समाज के प्रति अपनी गिलहरी सेवा प्रदान करता है। साहित्याकाश के दैदिप्यमान तारों में - चंदबरदाई, विद्यापति,कबीर,जायसी,सूरदास, तुलसी, केशवदास, मीराबार्स रसखान, रहीम, बिहारी, भूषण, घनानंद, मैथिलीशरण गुप्त, राधारीसिंह, 'दिनकर' , अज्ञेय, नागार्जुन, निराला, प्रेमचन्द, जैनेंद्र, यशपाल, बसवेश्वर, वेमना, कुवेंपु, सर्वज्ञ, प्लेटो, अरस्तू, शेक्सपीयर जैसे कई साहित्यकार अविस्मरणीय हैं। इनके द्वारा विरचित साहित्य सर्वकालिक एवं सर्वप्रासंगिक है क्योंकि मनुष्य की मनोवृत्ति प्रसंगानुरूप सार्वत्रिक एवं सर्वकालिक एक रूप होती है।

उपर्युक्त इन विभिन्न जाति, धर्म, भाषा - प्रांत एवं काल वाले साहित्यकारों में से मुसलमान के प्रसिद्ध कवि रहीम का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करने का प्रयास करता हूँ।

रहीम का संक्षिप्त परिचय-

हिंदी साहित्य जगत् के कवियों में से रहीम का नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। रहीम का पूरा नाम अब्दुल रहीम खानखाना था। इनके पिता का नाम बैरम खाँ था जो सम्राट अकबर के हितचिंतक एवं शिक्षक थे। कवि रहीम का जन्म लाहौर में सन् 1556 अर्थात् संवत् 1610 में हुआ था। इनके पिता के देहावसान के बाद बादशाह अकबर ने रहीम की शिक्षा -दीक्षा का भार अपने ऊपर लियाऔर उन्हें बहुभाषी विद्वान बना दिया। संस्कृत, अरबी, फ़ारसी, तुर्की आदि कई भाषाओं के रहीम प्रकांड पंडित थे। कलम तथा तलवार के धनी माने जाने वाले रहीम बड़े सच्चरित्रवान, उदार, परोपकारी तथा प्रतिभासंपन्न कवि थे।

कहा जाता है कि रहीम के रूप -सौदर्य एवं वाक् चातुर्य से प्रभावित हो एक सुंदरी ने फिदाहोकर निर्बाधित समय पर उन्हें अपने घर आमंत्रित किया तदनुसार उस नारी के घर पधार कर इस नवयुवक रहीम ने उस नारी से घर बुलाने का कारण पूछा तो नारी लज्जित हो तुरंत बोल उठी -'' मैं तुम्हारे

जैसा पुत्र चाहती हूँ।'' प्रत्युत्तर में रहीम ने कहा - '' मान लो यदि तुम्हें मेरे समान पुत्र भी हुआ तो कौन जानता है कि वह सुपुत्र निकलेगा या नहीं, इसलिए मुझे ही अपना पुत्र समझो।'' इस भाँति कहते हुए इन्होंने उसकी गोद में अपना सिर रख दिया। इस उदाहरण से रहीम के सात्विक व्यक्तित्व का परिचय मिलता है। शत्रु के साथ भी मित्रतापूर्ण बर्ताव करने की विशिष्टता हमें उदारवादी एवं मानवतावादी कवि रहीम में देखने को मिलती है। मानवतावादी कवि होने के कारण ही मुसलमान कवि रहीम का लगाव न केवल मुसलमान धर्म के प्रति अपितु हिंदू धर्म के प्रति तथा श्रीकृष्ण भक्ति के प्रति विशेष रूप से दृष्टिगोचर होता है। उदार एवं परोपकारी मनोवृत्ति के कारण ही इनकी तुलना दानवीर कर्ण के साथ की जाती है। रहीम ने अपने जीवन काल में कई उतार-चढ़ाव देखे हैं , खट्टे-मीठे दिन देखे हैं। अपनी जीवनानुभूति पर आधारित इनकी कुछ रचनाएँ हैं - रहीम सतसई, बरवै नायिका भेद, श्रृंगार सोरठ आदि। ब्रज और अवधी में भी इन्होंने अपनी रचनाएँ की है । हिंदी में नीतिकार कवि के रूप में रहीम को विशेष प्रसिद्धि प्राप्त है। अतएव इनके द्वारा विरचित रहीम सतसई कुछ नीतिपरक दोहों को यहाँ प्रस्तुत कर रहा हूँ - **रहिमन निज संपत्ति बिना, कोउ न विपत्ति सहाय।**
बिनुपानी ज्यों जलज को, नहिं रवि सकै बचाय।।

प्रस्तुत दोहे के माध्यम से नीतिकार रहीम समाज को यह सीख देना चाहते हैं कि अपनी संपत्ति के बिना विपत्ति में कोई भी सहायक नहीं हो सकता, चाहे वह कितना भी हितैषी क्यों न हो। जैसे -सूर्य कमल का परम मित्र है और वही उसे विकसित करता है परंतु पानी के अभाव में वह भी कमल को सूखने (मुरझाने) से बचा नहीं सकता। तात्पर्य यह है कि धन का अपव्यय न करके उसका सदुपयोग करना चाहिए।

अतएव रहीम आगे कहते हैं -

''कहि रहीम संपत्ति सगे, बनत कहत बहु रीत।
बिपति कसौटी जे कसे, तेई साँचे मीत।''

अर्थात् रहीम कहते हैं कि जब मनुष्य के पास मान -सम्मान और धन -संपत्ति होती है तब लोग उसके साथ अनेक प्रकार के रिश्ते-नाते जोड़ने का प्रयास करते है। और यदि उसके पास धन - संपत्ति न हो तो उसके नजदीक भी नहीं आते । सगे -संबंधी होकर भी उससे दूर रहने का प्रयास करते हैं ऐसे लोग स्वार्थी होते हैं। सच्चे अर्थ में सगे - संबंधी या मित्र तो वे ही कहलाते हं जो दुख-दर्द या विपत्ति में काम आते हैं। ऐसे स्वार्थी एवं ढोंगी सगे-संबंधी तथा मित्रों की तुलना जल और मछली के साथ करते हुए रहीम जी कहते हैं कि-

'' जाल परे जल जात बहि,तजि मीनन को मोह।
रहिमन मछरी नीर को, तऊ न छोंड़ति छोह।''

अर्थात् पानी में जाल डालते ही मछली तो जाल में फँस जाती है किंतु पानी अबाध गति से बह जाता है। तात्पर्य है कि पानी से सच्चा प्रेम करने वाली मछली जल के बिछोह से तड़प तड़पकर अपने प्राण त्याग देती है किंतु स्वार्थी मनुष्य रूपी पानी तड़पती हुई मछली की परवाह

किये बिना अबाधित गति से बह जाता है।

मनुष्य को ढ़ोंगी एवं स्वार्थी नहीं बनना चाहिए। मनुष्य को परोपकारी बनना चाहिए। परोपकारी ऐसे, जैसे कि वृक्ष एवं सरोवर होते है। रहीम कहते हैं –

'' तरुवर फल नहि खात है, सरवरपियत न पान।
कहि रहीम परकाज हित,संपत्ति–सचहि सुजाना।''

अर्थात् रहीम कहते हैं दूसरों के हित के कारण ही वृक्ष अपने फलों को स्वयं नहीं खाते तथा सरोवर अपना जल आप नहीं पीते, ठीक इसी भाँति परोपकारी, निस्वार्थी एवं बुद्धिमान लोग परहितार्थ धन –संचय करते है।

सुख –दुख एवं खुशी और गम में विचलित न होने की सीख देते हुए मनुष्य से रहीम कहते हैं–

धरती की –सी रीत है, सीत घाम औ मेह।
जैसी परे सो सहि रहे, त्यों रहीम यह देह।

अर्थात् सुख –दुख को समान रूप से सहने की शक्ति मनुष्य में होनी चाहिए। जैसे –धरती सरदी, गरमी और बरसात सभी मौसम समान रूप से सहती है।

मानवीयता का प्रचार –प्रसार करने हेतु दीन–हीन, अपंग तथा परावलंबी बेसहारा व्यक्ति की मदद करने के लिए प्रेरित प्रोत्साहित करते हुए रहीम कहते हैं –

'' दीन सबन को लखत है, दीनहि लखै न कोय।
जो रहीम दीनहि लखै, दीनबन्धु सम होय।।''

अर्थात् निर्धन परावलंबी व्यक्ति सभी से सहायता की आस रखता है, परंतु उस निर्धन की ओर कोई नहीं देखता। नीतिकार रहीम कहते हैं कि जो व्यक्ति गरीब की ओर देखकर उसकी सहायता करता है , वह भगवान के समान होता है।

बडों का मान और छोटों का अपमान न करने की सीख देते हुए पारखी रहीम हम से कहते हैं –

'' रहिमन देख बड़ेन को, लघु न दीजै डारि।
जहाँ काम आवै सुई, कहा करै तलवारि।।''

अर्थात् बड़े–छोटे या अमीरी–गरीबी के आधार पर पक्षपात नहीं करना चाहिए, छोटों की उपेक्षा करना उचित नहीं है क्योंकि छोटों का भी अपना विशेष महत्व एवं अस्तित्व होता है। जहाँ छोटी सुई की आवश्यकता होती है, वहाँ बड़ी तलवार से क्या लाभ ?

अपना दुख–दर्द या संकट अपने मन में ही छिपाकर रखकर उसका सामना करना चाहिए किसी और के सामने अपना दुखड़ा कभी नहीं रोना चाहिए इस मूलमंत्र की सीख देते हुए रहीम कहते हैं –

'' रहिमन निज मन की बिथा,मन ही राखो गोय।
सुनि अठिलैहे लोग सब, बांटि नलैंह कोय।।''

तात्पर्य यह है कि अपने मन की पीड़ा, अपने मन का दुख अपने मन में ही छिपाकर रखना श्रेयस्कर है, किसी दूसरे के सामने कदापि प्रकट नहीं करना चाहिए क्योंकि प्राय: देखा गया है कि दूसरों के दुख दर्द को सुनकर लोग हँसी –मजाक उड़ाते हैं, उसे बाँटने या दूर करने का प्रयत्न कोई नहीं करते। रहीम आगे कहते हैं –

''यह रहीम निज संग ले, जनमत जगत न कोय।
बैर प्रीति अभ्यास अस, होत–होत ही होय।।''

कवि रहीम का उद्देश्य यह है कि कुछ वस्तुएँ व्यक्ति अपने साथ लेकर पैदा नहीं होता।

ये हैं– बैर, प्रेम, अभ्यास और यश। ये चारों तो धीरे –धीरे विकसित होते हैं। अतएव मनुष्य को सफलता प्राप्त करने हेतु सर्वदा प्रयत्नशील रहना चाहिए। असफलता से हताश होकर कदापि बुरी आदतों के शिकार नहीं होना चाहिए। इससे यश नहीं अपयश, सुख नहीं दुख, मान नहीं अपमान ही हाथ लगता है। अतएव रहीम कहते हैं –

'' खैर, खून, खाँसी, खुसी, वैर, प्रीति,मद–पान।
रहिमन दाबे ना दबै, जानत सकल जहान।।''

भाव यह है कि हत्या, खाँसी, प्रसन्नता, शत्रुता, प्रेम और मद्यपान छिपाने की लाख कोशिश करने पर भी छिप नहीं सकते। वे आगे लिखते हैं–

'' बिगरी बात बनै नहीं, लाख करो किन कोय।
रहिमन फाटे दूध को, मथेन माखन होय।''

अर्थात् रहीम कहते हैं कि जब कोई बात एक बार बिगड़ जाती है तो लाख कोशिश करने पर भी वह बनती नही, जैसे– फटे हुए दूध को घंटों तक मथने से भी उसमें से मक्खन कदापि नहीं निकलता। अतएव बात बिगडने न देने में ही कुशलता है। इसी विचार को कवि रहीम दूसरे शब्दों में इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं –

''रहिमन धागा प्रेम का, मत तोरेउ छटकाइ।
टूटे ते फिर न मिले, मिले गाँठि परि जाइ ।।''

रहीम कहते हैं कि किसी का दिल नहीं दुखाना चाहिए। दिल बड़ा नाजुक होता है। अर्थात् प्रेम का धागा बड़ा नाजुक होता है। अत: उसे टूटने मत देना क्योंकि टूटने के पश्चात् जोडने का प्रयास करने पर उसमें अवश्य ही ग्रंथी आ जायेगी।

बडी से बड़ी विपत्तियों में भी चिंतित न होने का संदेश देते हुए नीतिज्ञ रहीम जी कहते हैं कि –

'' रहिमन कठिन चिताहु तें, चिंता को चित चेत।
चिता दहति निजीव को, चिंता जीवन समेत।।''

तात्पर्य है कि मनुष्य को कठिन से कठिन कार्यों में भी चिंतित एवं विचलित नहीं होना चाहिए। कुशलतापूर्वक निश्चिंत होकर समस्या का समाधान (सामना) करना चाहिए, क्योंकि चिंता मनुष्य को चिता की ओर अग्रसर करती है। चिता मृत शरीर को जलाती है तो चिंता जीवंत शरीर को। चिंता, चिता से भी घातक होती है। अतएव चिंतामुक्त होकर क्रियाशील रहने में ही मनुष्य जीवन की सार्थकता है, यही सफल जीवन है।

निष्कर्षत: कहा जाता है कि नीति परक रहीम के दोहे एक आदर्श, सुखशांतिपूर्ण, समृद्धशाली एवं सुदृढ़ समाज की निर्मिति के लिए सक्षम हैं। इसीलिए हिंदी के प्रसिद्ध आलोचक विश्वंभर ' मानव' अपनी पुस्तक ' प्राचीन कवि' के पृष्ट सं. 148 पर रहीम के विषय में लिखते हैं कि **'' भारतवर्ष के गाँवों में इनके दोहों का प्रचार घर –घर में है। साहित्य प्रेमियों की बात तो दूर, अपढ़ किसानों तक को इनके दोहे स्मरण होंगे।''** इस भाँति रहीम का काव्य सर्वकालिक प्रासंगिक है। जब तक सूर्य,चंद्र एवं समाज रहेगा तब तक इनका काव्य समाज के लिए निस्संदेह मार्गदर्शक रहेगा। *

ISSN : 2320-0391

सृजन ಸೃಜನ

हिन्दी-कन्नड साहित्य और संस्कृति ಹಿಂದಿ-ಕನ್ನಡ ತ್ರೈಮಾಸಿಕ ಪತ್ರಿಕೆ

जनवरी-मार्च २०१७ त्रैमासिक पत्रिका

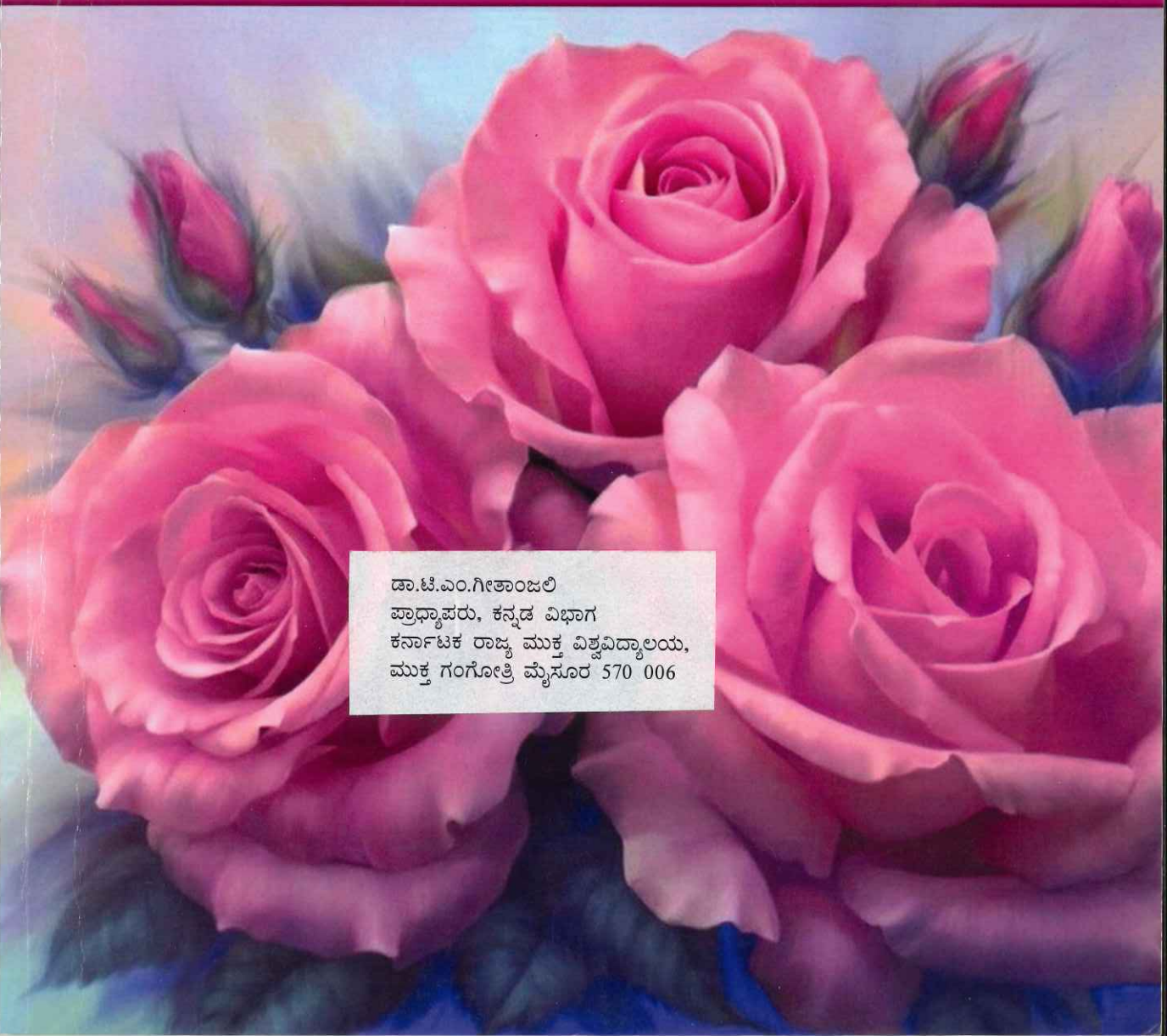

ಡಾ.ಟಿ.ಎಂ.ಗೀತಾಂಜಲಿ
ಪ್ರಾಧ್ಯಾಪರು, ಕನ್ನಡ ವಿಭಾಗ
ಕರ್ನಾಟಕ ರಾಜ್ಯ ಮುಕ್ತ ವಿಶ್ವವಿದ್ಯಾಲಯ,
ಮುಕ್ತ ಗಂಗೋತ್ರಿ ಮೈಸೂರ 570 006

अनुक्रम

लेख

1.	हिंदी के प्रति समर्पित महिला बी. एस. शांताबाई	श्र	डॉ. जुबेदा एच. मुल्ला	1
2.	इक्कीसवीं शताब्दी की भारतीय नारी और चुनौतियाँ	श्र	प्रो. अशोक कांबले	3
3.	मैथिलीशरण गुप्त तथा कुवेंपु के काव्य में सामाजिक विचारधारा	श्र	डॉ. एस. टी. मेरवाडे	7
4.	अज्ञेय तथा उनके उपन्यास : एक मूल्यांकन	श्र	डॉ. एच. एम. अत्तार	13
5.	धूमिल की काव्य भाषा	श्र	डॉ. नाजिम शेख	16
6.	'फाँस' उपन्यास की संवेदना	श्र	डॉ. गोविन्द बुरसे	19
7.	शरद जोशी के नाटकों में राजनीतिक व्यंग्य	श्र	डॉ. गुलाब राठोड	24
8.	''गिलिगडु'' उपन्यास में चित्रित पारिवारिक जीवन	श्र	अमोल तुकाराम पाटील	28
9.	'विजन' में चित्रित स्त्री विमर्श	श्र	वैशाली व्येंकटेश कुंभार	31

■■

इक्कीसवीं शताब्दी की भारतीय नारी और चुनौतियाँ

• प्रो. अशोक कांबले

प्रस्तावना

किसी भी देश की सभ्यता, संस्कृति की उन्नति का मूल्यांकन समाज के मेरूदंड नारी की स्थिति से आंका जाता है । नारी समाज की नींव तथा उसका एक अविभाज्य अंग है । नारी के अभाव से सभ्यता और संस्कृति के अधिष्टाता मातृ नारी को पूजनीय मानते हैं ।

नारी त्याग, दया, ममता, करुणा, सहनशीलता की प्रतिमूर्ति है । नारी समस्त विश्व की मूल है । जिसके बिना यह सृष्टि अपूर्ण मानी जाती है । सृष्टि के आरंभ से नारी शारीरिक रूप से एक सी रही है । पर समाज में उसकी स्थिति सदैव परिवर्तनशील रही है और उसके प्रति समाज का रवैय्या कभी एकसा नहीं रहा । यह समाज समयानुसार गिरगिट की तरह रंग बदलता रहा । कभी उसने नारी के प्रति इतनी उदारता दिखाई कि उसे जगत् जननी, गृहलक्ष्मी आदिस्वरूप कहा । कभी पुरुष जगत् के लिए मातृदेवों भव की उच्च उपाधि से सम्मानित किया ।

नारी माता, पत्नी, पुत्री, बहन बनके अपना कर्तव्य निभाती है । इसीलिए कहा जाता है–

"यत्र नार्यस्तु पूज्यंते,
रमंते तत्र देवता: यत्रैतास्तु न
पूज्यंते सर्वत्रा फलं किया ।"

अर्थात् जहाँ नारी को पूज्य भाव से देखा जाता है वह भगवान वास करते हैं, जहाँ नारी को पूज्य भाव से नहीं देखते हैं, तो वे सभी लोग दु:खी रहते हैं वहाँ देवता वास नहीं करते ।

नारी बाल्यावस्था में पिता के, यौवन में पति के और बुढापें में पुत्र के आश्रय में रहती है ।

1. वैदिक काल में भारतीय नारी का स्थान

भारत की सांस्कृतिक परंपरा की शुरुआत ही वेदों से वैदिक काल से हुई । नारी का सामाजिक स्थान बहुत अच्छा था । वैदिक काल में जहा नारी को सम्माननीय स्थान देकर उसे भगवती, शुभगे, सरस्वती आदि आदर सूचक नाम से अभिहित किया गया । वैदिक काल को नारियों का सुवर्ण काल कहा जाता है । इस युग में –

1. नारी को स्वतंत्रता मिली ।
2. शिक्षा में नारी को समान अवकाश था ।
3. विवाह और परिवार के जिम्मेदारी में समानता थी ।
4. धन का अधिकार और उत्तराधिकार ।
5. धार्मिक कार्यों में समानता थी ।
6. सार्वजनिक जीवन में नारी का पात्र बहुत महत्वपूर्ण था ।

वैदिक काल में लडकों की भांति लडकियाँ पढाई करते थे । उदा : अपका, गार्गि, शचि, अरूंधति, सरता, सुलभा, लोपमुद्रा, घोषा आदि ऋषियों की पत्नियाँ वेदांत के पंडिताइन थे ।

2. मध्यकाल में नारी का स्थान

मध्यकाल में मुगलों का दरबार था । इन्होंने नारी को दासी बनाकर निकृष्ट स्थान दिया । कभी वह सहधर्मिणी, अर्धांगिनी थी तो कभी दासी या वासनापूर्ति का साधन बनी । मुसलमानों के आक्रमण तथा लडकियों के अपहरण के कारण यह युग अंधकार युग बन गया । सामाजिक, धार्मिक, शिक्षा का स्थान अच्छा नहीं था । हम निम्नलिखित शीर्षकों से इस काल को अंधकार युग मान सकतें हैं ।

1. बाल विवाह प्रथा
2. बहुपत्नी प्रथा
3. परदा प्रथा
4. वेश्यावृत्ति प्रथा
5. विधवा विवाह निषेध प्रथा

आदि कुरीतियों का जन्म इन्हीं के अत्याचारों और यातनाओं का ही परिणाम है । यह सच है कि नारी के प्रति यह युग अंधकार युग ही रहा ।

3. अंग्रेजों के काल में नारी का स्थान

अंग्रेजों के अधिकार में नारियों मे अनेक बदलाव आए । कई नेताओं और समाज सुधारकों के परिश्रम के फल स्वरूप नारी में जागृति आयी है । इन बदलाव के कारण निम्न लिखित है –

1. जीवन के दृष्टिकोन में नयापन ।
2. समाज सुधारक और आंदोलनों का पात्र ।
3. अंग्रेजी शिक्षा का प्रभाव ।
4. महिला नेताओं और महिला संघटनाओं का प्रभाव ।

इस काल में जीवन में अधिक नयापन का प्रभाव पडा है । राजाराम मोहनराय ने ब्रह्म समाज की स्थापना की, इसके द्वारा सतीप्रथा निषेध कानून जारी हुआ । ईश्वर चंद्र विद्यासागर ने विधवा पुनर्विवाह जारी किया । दयानंद सरस्वती, विवेकानंद आदि लोगों ने नारी समस्याओं का समाधान किया ।

4. स्वतंत्र भारत में नारी का स्थान

स्वतंत्र भारत में स्त्रियों का स्थान-मान बहुत सुधरा है । राजकीय और संस्कृतिक बदलाव के परिणाम स्वरूप नारी को सभी क्षेत्रों में समानता प्राप्त हुई है । 1985 में आयोजित अंतर राष्ट्रीय महिला वर्ष के कार्यक्रम में नारी के स्थान में परिवर्तन लाने में विशेष रूप से बल दिया गया है । महिलाओं के स्थान में बदलाव लाने में कारण निम्न लिखित है –

पिछले तीन-चार दशकों में राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, नैतिक एवं सांस्कृतिक सोच में तेजी से बदलाव हुआ है । भ्रष्टाचार का बोलबाला, असंवेदनशील नौकरशाही लोकतंत्र, उपभोक्तावाद, बाजारवाद का जोर संचार माध्यमों का विस्तार शहरों की ओर पलायन, बेरोजगारी की समस्या, महँगाई की मार आदि ऐसे कारण हैं, जिनकी वजह से आम जनता के जीवन लक्ष्य में भटकाव की स्थिति आ रही है । तत्कालिक सुख-भोगेच्छा, दिशाहीनता, हिंसा, आतंक, चाटुकारित, निराशा, अकेलेपन, विवशता, एकरसता, अस्थिरता आदि विसंगतियों ने समाज को गहराई से प्रभावित किया है, ये समस्याएँ आम जनता की होने के कारण महिलाओं की भी हैं । इन सबके अतिरिक्त महिला होने के कारण कुछ और मोर्चों पर इन्हें कठिनाइयों का सामना करना पडता है, क्योंकि पुरुष से एक दर्जे नीचे के मनुष्य मानकर इनके साथ व्यवहार किया जाता है । लैंगिक भेदभाव, कुपोषण, यौन उत्पीडन, बलात्कार, दहेज उत्पीडन, वैधव्यता, राजनीतिक प्रतिनिधित्व का अभाव, उत्तराधिकार की समस्या, अशिक्षा, निरक्षरता, विस्थापन की पीडा, मृत्यु दर की अधिकता, पर्सनल लॉ की मौजूदगी आदि अनेक

परंपरागत और आधुनिक जीवन की समस्याएँ हैं, जिनका शिकार होकर स्त्री जाति घुटती रही है । पुरुष सत्तात्मक मूल्यों के आधिपत्य के कारण स्त्री के स्त्रीत्व-संपन्न व्यक्तित्व के विकास का मार्ग अवरूद्ध रहा है ।

कन्या भ्रूण हत्या

स्त्री भ्रूण हत्या का प्रचलन अपने समाज में निरंतर बढता जा रहा है । यह अजीब विडंबना है कि जब पूरा विश्व समुदाय स्त्री-जाति के बहुमुखी विकास के लिए प्रयासरत है, वही लाखों भ्रूणों की हत्या इसलिए कर दी जाती है कि वह कन्या के रूप में जन्म ले रही है । यह वृत्त मानवाधिकारों की चिंता से सर्वथा विपरीत है । यह सब आधुनिक विकास और विज्ञान के नाम पर हो रहा है । पहले कन्या वध अंधविश्वास के कारण किया जाता था, पर आजकल यह वैज्ञानिक उन्नति के कारण संभव हो रहा है । यह स्त्री-पुरुष के समानुपातिक संतुलन के प्रति गंभीर खतरा है, जो प्रकृति का संतुलन भी बिगाड देगा ।

मृत्यु दर अधिकता

महिलाओं की मृत्यु दर भी पुरुषों से ज्यादा है । स्त्रियाँ सिर्फ कम पैदा ही नहीं होती, वरन् पुरुषों की तुलना में मरती भी अधिक हैं । प्रतिवर्ष अपने यहाँ एक करोड बीस लाख जन्म लेनेवाली बच्चियों में से तीन लाख हर साल मरती हैं । बाकी 25 प्रतिशत 15 साल की उम्र तक खत्म हो जाती हैं तथा स्त्रियों की कुल मृत्यु के 50 प्रतिशत 30 वर्ष की आयु रेखा के भीतर ही पूरी हो जाती है । प्रति 1000 औरतों में से 5-6 की मृत्यु प्रसूति के दौरान हो जाती है ।

स्त्रियों की मृत्यु दर अधिक होने का मूल कारण भारतीय समाज में लडकी के जन्म को मजबूरी में स्वीकार करनेवाली भावना है, इसे एक ईश्वरीय बोझ ही माना जाता है ।

देह व्यापार

स्त्री के देह का कारोबार विश्व के सभी देशों में तथा सभी कालों में भिन्न-भिन्न रूपों में विद्यमान रहा है, इस बुराई के नए संस्करण को लाइसेंस भी दिया जा रहा है । आधुनिक भारतीय समाज में जहाँ परंपरागत वेश्यावृत्ति धंधे के रूप में सामने आयी है । एक अनुमान के अनुसार भारत में करीब तीस लाख परंपमरागत वेश्याएँ इस समय हैं, जिनमें से एक चौथाई नाबालिग हैं । वस्तुत: जहाँ इक्कीसवीं सदी को महिलाओं की सदी के रूप में मानने का लक्ष्य व्यक्त किया गया हैं । वहाँ सब निर्बाध गति से चलना न तो स्त्रीत्व के संस्कृति की श्रेष्ठता के उपयुक्त हैं ।

यौन उत्पीडन और बलात्कार

देह का व्यापार तो फिर भी कहीं स्त्री की इच्छा पर निर्भर करता है, परंतु यौन शोषण और बलात्कार स्त्री की इच्छा के विरुद्ध पुरुष की पाश्विकता के कारण संपन्न होता है । जहाँ बलात्कार कुछ क्षण में ही स्त्री की जीवन धारा को मोड देता है, वहीं यौन उत्पीडन सुदीर्घ चलनेवाली प्रक्रिया है जिसमें स्त्रियाँ घुट-घुट कर अपमानित होती हैं । घर की चार दीवारी को लाँघकर बाहर की जिम्मेदारी संभालने के साथ ही कार्य स्थल पर महिलाओं का तरह-तरह से यौन शोषण किया जाता है । यौन उत्पीडन से पीडित स्त्री के लिए चुपचाप सहने के सिवा विद्रोह करना काफी मुश्किल होता है । विवाद का विषय बनाने पर उसे पारिवारिक विरोध, सामाजिक उपेक्षा, आर्थिक हानि तथा चरित्र हनन जैसी दुस्सह स्थितियों से गुजरना पडता है, नौकरी से हाथ धोना तथा घोर मानसिक यातना से जूझना पडता है ।

विस्थापन

असंतुलित और अनियोजित विकास योजनाओं व कार्यक्रमों तथा नई औद्योगिक आर्थिक, व्यावसायिक

नीतियों के कारण हजारों लाखों लोग विस्थापित होते रहे हैं । रोजगार की खोज में अपनी जड से कटकर शहरों की ओर पलायन करते रहे हैं । कुछ लोग उग्रवादी-आतंकवादि गतिविधियों तथा युद्ध व दंगों से तंग आकर कहीं अन्य जगह में शरण लेने के लिए बाध्य होते हैं, जिसका सबसे खराब असर बच्चों और महिलाओं पर पडता है । कश्मीर के विस्थापित लोग बडे-बडे शहरों के विभिन्न कैंपों से आज भी नारकीय जीवन का व्यतीत कर रहे हैं जहाँ की महिलाओं की दुरावस्था का अंदाजा लगाया जा सकता है । इसके अतिरिक्त युद्ध, दंगा, अकाल, बाढ, महामारी आदि के कारण महिलाएँ विस्थापित होती हैं ।

उपसंहार

इक्कीसवीं सदी महिलाओं की शताब्दी घोषित की गई है । आज हम इक्कीसवीं सदी के दूसरे दशक में खडे हैं तो महिलाओं की इक्कीसवीं सदीवाली संभावनाओं को जाँचा-परखा जाना चाहिए । चूँकि यह बात नारीवादियों से आगे बढकर पूरी बौध्दिक - वैश्विक चेतना से उभरी है, अत: इसके मूल में कहीं-न-कहीं यह भावना भी निहित है कि महिलाएँ केवल महिलाओं की दृष्टि से सक्षम-समृद्ध नहीं होगी, बल्कि उनकी ताकत के बल पर इस सदी के विश्व मानव का आधार तैयार होगा । यह सत्य है कि महिलाएँ अब लंबे अंधेरे के बाद जाग उठी हैं । उन्हें अपनी गरिमा का बोध हो रहा है कि वह किसी भी तरह पुरुष से कम नहीं है । नारी चेतना में जागृति की यह आँधी अब अपने गौरव पद से वंचित करनेवाली सारी प्रतिकूलताओं व बाधाओं को उखाड फेकेंगी व अपने लक्ष्य को प्राप्त करके ही दम लेगी । इसके प्रगतिशील चरणों को अब कोई रोक नहीं सकता । बेहतर होगा कि अपने पौरुष एवं श्रेष्ठता का दंभ भरनेवाला पुरुष अब चेत जाए व नारी शक्ति के सर्वांगीण उत्कर्ष में बाधक बनने की बजाय उसको हर तरह से सहयोग दे ।

मतलब साफ है कि यह सदी भारत की महिलाओं की होने जा रही है, अत: इस भूमिका के निर्वाह के लिए उन्हें भारतीयता से सुसज्जित होना तथा हर भारतीय को महिलाओं की प्रगति का पर्याय बनना होगा ।

■■

अध्यक्ष, हिंदी विभाग, कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय, मैसूर
मो. 09449638999

ISSN : 2320-0391

सृजन ಸೃಜನ

हिन्दी-कन्नड साहित्य और संस्कृति

ಹಿಂದಿ-ಕನ್ನಡ ತ್ರೈಮಾಸಿಕ ಪತ್ರಿಕೆ

जनवरी-मार्च २०१६

त्रैमासिक पत्रिका

PRINTED MATTER

Dr.Ashok Kamble
Professor, Dept of Hindi,
Karnataka State, Open University,
Muktagangotri, Mysore-570006

अनुक्रम

लेख

1.	उपन्यास साहित्य में सुधारात्मक दृष्टिकोणः प्रेमचंद, निराला और अनामिका का विशेष संदर्भ	• ऋषभदेव शर्मा एवं पूर्णिमा शर्मा	1
2.	अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी का योगदान (टी.वी. चैनल्स, इंटरनेट और पत्रिकाओं के विशेष संदर्भ में)	• डॉ. एस. टी मेरवाडे	5
3.	मृदुला गर्ग के उपन्यासों में चित्रित दांपत्य जीवन	• प्रा. बालु भोपू राठोड	9
4.	मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी शोषण की समस्या	• डॉ. रावसाहेब जाधव	13
5.	नई सदी का हिन्दी काव्य और मानवीय संवेदनाएँ	• डॉ. एस. जे. पवार	18
6.	हिन्दी यात्रा साहित्य : एक अवलोकन	• डॉ. कांबले अशोक	21
7.	भीष्म साहनी का उपन्यास 'मैयादास की माडी' में व्यक्त ऐतिहासिक तत्व	• डॉ. दुर्गारत्ना सी.	24
8.	हिन्दी लघुकथा : स्वरूप एवं विकास	• वर्षाराणी जबड	26

■■

हिन्दी यात्रा साहित्य : एक अवलोकन

• डॉ. कांबले अशोक

मनुष्य जन्मतः जिज्ञासुवृति का रहा है । वह नये-नये खोज करना चाहता है, नये स्थान का दर्शन करना चाहता है । मनुष्य प्रकृति और सौंदर्य का प्रेमी है । अतएव सौंदर्यबोध की दृष्टि से उल्लासपूर्ण भावना से प्रेरित एवं प्रोस्ताहित होकर यात्रा करता है और मुक्त कंठ से उस सौंदर्यानुभूति की अभिव्यक्ति करता है । दूसरे शब्दों में कहें तो उस यात्रा के दौरान प्राप्त अनुभवों को अभिव्यक्त करता है, उसे ही 'यात्रा साहित्य' या 'यात्रा वृत्तांत कहते हैं।

मानव घुमक्कड़ स्वभाव का रहा है, वह जहाँ भी यात्रा करता है, वहाँ से साहित्य की भाँति कुछ अवश्य ग्रहण करता है । उसके द्वारा ग्रहण किये गये अनुभवों को अपने शुद्ध मनोभावों से अभिव्यक्त करता है, जिसे पढ़कर पाठक, लेखक की भाँति ही उस सौंदर्यानुभूति का अनुभाव करने लगता है । साहित्य की उस विधा को ही 'यात्रा वृत्तांत' या 'यात्रा साहित्य' कहा जाने लगा है जो आधुनिक काल में निबंध शैली में प्राप्त होता है । इस साहित्य विधा का मुख्य उद्देश्य लेखक के ज्यों का त्यों रमणीय अनुभवों को पाठक तक पहुँचाना है । पाठक जो कि घर बैठ ही कम समय एवं कम खर्चे में लेखक-सा अनुभव कर सके ।

वैसे तो यह घुमक्कड़ प्रवृत्ति हमें मनुष्य में आदिकाल से ही दृष्टिगोचर होती है । आदिकालीन कुछ लेखक एक-दूसरें देशों में घूमा करते थे और अपने अनुभवों को घूम-घूमकर दूसरों तक पहुँचाया करते थे । इस काल में नौका से यात्रा करते-करते दूसरे देश में घुसना एवं वहाँ की भाषा, संस्कृति, समाज आदि का दर्शन करके अपनी आत्मानुभूति की अभिव्यक्ति कर वहाँ का समग्र चित्र दूसरों के सम्मुख प्रस्तुत करने का प्रयास करते थे । इस काल के मुख्य यात्री थे - अलबरूनी, इब्नेबतूता, अमीर खुसरो, हेनसांग, मार्कोपोलो, सेल्यूकस आदि ।

बाणभट्ट और कालिदास के साहित्य में भी यत्र-तत्र यात्रा वर्णन मिलते हैं ।

निबंध शैली में व्यक्ति परकता, स्वच्छंदता, आत्मीयता आदि गुण यात्रा साहित्य में पाए जाते हैं । यात्रा साहित्य विविध शैलियों में भी लिखा जाता है । कुछ यात्रा वृतांत ऐसे होते हैं जिनका उद्देश्य विभिन्न देशों या स्थानों का सविस्तार परिचय देना मात्र होता है । पं. राहुल सांकृत्यायन का 'हिमालय परिचय' और शिवनंदन सहाय का 'कैलाश दर्शन' इसी प्रकार के यात्रा वृत्तांत हैं । कुछ यात्रा साहित्य का उद्देश्य - देश-विदेश के व्यापक जीवन को चित्रित करना होता है । यथा- यशपाल का-'लोहे की दीवार के दोनों ओर', गोविंददास का -'सुदूर दक्षिण-पूर्व' आदि प्रसिद्ध हैं ।

मुख्य रूप से यात्रा साहित्य का आविर्भाव साहित्यकाश के दैदिप्यमान तारे भारतेंदु के युग से ही माना जाता है । भारतेंदु ने खड़ीबोली का विकास कर अनेक साहित्य विधाओं को जन्म दिया है । खड़ीबोली जनमानस की बोली थी जिसके कारण इस भाषा में लिखा साहित्य आम व्यक्ति भी आसानी से समझने लगा, यही कारण है कि खड़ीबोली का प्रचार-प्रसार द्रुत गति से होने लगा और साहित्य की अनेक विधाओं का जन्म होने लगा। अतएव भारतेंदुकाल को गद्यकाल कहा जाने लगा। इस काल में गद्य शैली में लिखे अनेक ग्रंथ उपलब्ध होते हैं जो कि यात्रा साहित्य के अंतर्गत आते हैं । यथा-हरिद्वार, लखनऊ, रायपुर आदि ।

यात्रा साहित्य की प्रमुख कुछ रचनाएँ एवं रचनाकार

1. रामेश्वर यात्रा (1893) - देवीप्रसाद खत्री
2. मेरी कैलाश यात्रा (1915) - स्वामी सत्यदेव
3. मेरी जर्मन यात्रा (1926) - स्वामी सत्यदेव
4. हमारी जापान यात्रा (1931) - कन्हैयालाल मिश्र
5. यूरोप यात्रा के छह मास - रामनारायण मिश्र

जो भारतेंदु हरिश्चंद्र ने यात्रा साहित्य की नींव डाली वह जयशंकर प्रसाद के युग में फल-फूलकर वटवृक्ष का रूप धारण कर चुकी है । नाटक, कहानी, उपन्यास, निबंध आदि साहित्यिक अन्य विधाओं में यात्रा-साहित्य लिखा जाने लगा । इसलिए हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यकार जयशंकर प्रसाद जी को भारतेंदु का उत्तराधिकारी कहते हैं । इस काल में स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए कई आंदोनल किये गये और अंततोगत्वा स्वतंत्रता प्राप्त की भी गयी । इस युग के प्रमुख यात्रा साहित्यकार थे - केदारनाथ, नागार्जुन, राहुल, सांकृत्यायन आदि ।

घुमक्कड़ प्रवृत्तिवाले राहुल सांकृत्यायन जी का यात्रा साहित्य को अपना विशेष योगदान प्राप्त है जिन्होंने अनेक देश-विदेशों की यात्राएँ की। ये दुर्गम घाटियों एवं पहाड़ों की यात्रा करने के लिए भी कभी हिचकते न थे ।

यात्रा के संदर्भ में राहुल सांकृत्यायन जी का अभिमत है-''जिसने एक बार घुमक्कड़ धर्म अपना लिया, उसे पेंशन कहाँ, उसे विश्राम कहाँ ? आखिर में हड्डियाँ कटते ही बिखर जाएँगी।'' आजीवन यायावर रहे ।

राहुल सांस्कृत्यायन जी के प्रमुख यात्रा-ग्रंथ हैं - मेरी तिब्बत यात्रा, मेरी लद्दाख यात्रा, रूस में पच्चीस मास, तिब्बत में सवा वर्ष, मेरी यूरोप यात्रा आदि ।

अज्ञेय तथा अज्ञेय के साहित्यकार मित्रों ने हिंदी साहित्य को कई बंधनों से मुक्त करके उन्हें नया आयाम व दिशा दिलायी । साहित्यिक क्षेत्र में लोगो को आकृष्ट किया । 'अज्ञेय' ने यात्रा साहित्य के क्षेत्र में अपना विशेष योगदान देते हुए कहा है - ''यायावर को भटकते हुए चालीस बरस हो गये, किंतु इस बीच न तो वह अपने पैरों तले घास जमने दे सका है, न ठाठ जमा सका है, न क्षितिज को कुछ निकट ला सका है..... उसके तारे छूने की तो बात ही क्या।.....यायावर न समझा है कि देवता भी जहाँ मंदिर में रुके कि शिला हो गये, और प्राण संचार की पहली शर्त है कि गतिः गतिः गतिः।''

अज्ञेय के प्रमुख यात्रा वृत्तांत हैं - अरे यायावर रहेगा याद (1953), एक बूंद सहसा उछली (1964)

अन्य कुछ मुख्य यात्रा साहित्यकार तथा उनके ग्रंथ

भारतेंदु हरिश्चंद्र

सरयू पार की यात्रा, लखनऊ की यात्रा, जनकपुर की यात्रा, वैद्यनाथ की यात्रा । जबलपुर और हरिद्वार (रुडकी-हरिद्वार वर्णन), रामवृक्ष बेनीपुरी-पैरों में पंख बाँधकर (1952), रामवृक्ष बेनीपुरी-उड़ते चलो, उड़ते चलो । यशपाल-लोहे की दीवार (1953) भगवतशरण उपाध्याय-कोलकाता से पैकिंग तक (1953), भगवतशरण उपाध्याय-सागर की लहरों पर (1959), मोहन राकेश-आखिरी चट्टान तक (1953), निर्मल वर्मा-चीड़ों पर चाँदनी (1964), बालकृष्ण भट्ट- गया यात्रा, प्रताप नारायण मिश्र-विलायत यात्रा, स्वामी सत्यदेव परिव्राजक - अमरीका दिग्दर्शन, अमरीका भ्रमण, गणेश नारायण सोमानी-मेरी यूरोप यात्रा, राहुल सांकृत्यायन - तिब्बत में सवा वर्ष, मेरी यूरोप यात्रा, घुमक्कड़शास्त्र, चीन में क्या देखा, मेरी तिब्बत यात्रा, किन्नरदेश में, चीन में कम्यून, सेठ गोविंददास - हमारा प्रधान उपनिवेश, नगेंन्द्र - तंत्रालोक से यंत्रालोक तक, यशपाल-रूस में छियालिस दिन, रामकृष्ण बजाज-जपान की सैर, रामधारी सिंह दिनकर - देश - विदेश, मेरी यात्राएँ, अज्ञेय - अरे यायावर रहेगा याद, एक बूँद सहसा उछली, ब्रजकिशोर नारायण - नंदन से लंदन तक, ठाकुर गदाधर सिंह -चीन में तेरह मास, हमारी एडवर्ड तिलक यात्रा, गोपाल प्रसाद व्यास-अरबों के देश में, लोचन प्रसाद पांडेय - हमारी यात्रा, प्रभाकर माचवे - गोरी नजरों में हम, विष्णु प्रभाकर-हँसते निर्झर, डॉ. नगेंन्द्र - अप्रवासी की यात्राएँ, राजेंद्र अवस्थी-सैलानी की डायरी, शिवानी - यात्रिका, धर्मवीर भारती - यात्राचक्र, मंगलानंद - मारिशस यात्रा।

जैनेंद्र कुमार, काका कालेलकर, अमृतराय, कमलेश्वर, अजित कुमार, रामदरश मिश्र, शिवप्रसाद सिंह, देवेंद्र सत्यार्थी, कर्णसिंह, चौहान असगर वजाहत, भगवानदास वर्मा, तोताराम वर्मा, दामोदर शास्त्री, कल्याणचंद्र, दिग्गू मिश्र आदि का यात्रा साहित्य अविस्मरणीय योगदान है ।

यात्रा साहित्य में यात्रा साहित्यकार अपनी यात्रा के प्रत्येक स्थल और क्षेत्रों में से उन्हीं क्षेत्रों का संयोजन करता है जिन्हें वह अद्‌भुत सत्य के रूप में ग्रहण करता है । बाहरी जगत की प्रतिक्रिया से उसके हृदय में जो भावनाएँ उमड़ती हैं, वे उन्हें अपनी संपूर्ण चेतना के साथ अभिव्यक्त कर देता है, जिसके शुष्क विवरण भी मधुर और भावविभोर कर देने वाला बन जाता है । पाठक एक साथ इतना तादात्म्य स्थापित कर लेता है, फिर वह स्वयं उस आनंद को प्राप्त करने के लिए तड़प उठता है ।

निष्कर्षतः कह सकते हैं कि यात्रा साहित्य के अध्ययन से वर्णित स्थान की आर्थिक स्थिति, सामाजिक स्थिति, धार्मिक स्थिति, भाषा-संस्कृति, शिक्षा पद्धति, प्रकृतिक सौंदर्य आदि का साक्षात्कार कम समय एवं धन से हो जाता है जिससे कि ज्ञानाभिवृद्धि के लिए सहायक एवं मनोरंजक बन जाता है । अतएव यात्रा साहित्य का अपना विशेष महत्व है ।

■■

प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिंदी अध्ययन एवं अनुसंधान विभाग, कर्नाटक राज्य मुक्त विश्वविद्यालय, मैसूर - 570006